असम राज्य

बनाम

भारत संघ और अन्य

(2010 की सिविल अपील संख्या 8378-8392)

सितम्बर 30, 2010

[डी.के. जैन और एच.एल. दत्तू, जे.जे.]

पक्षकारः

पक्षकार बनाना - अभिनिर्धारितः उत्प्रेषण रिट याचिका की कार्यवाही में, ना केवल अधिकरण या प्राधिकारी जिसके आदेश को रद्द करने की मांग की जाती है, बल्कि वे पक्ष भी होते है जिसके पक्ष में आदेश जारी किया गयाः- रिट याचिका स्वैच्छिक महिला परिचारकों द्वारा वार्ड गर्ल्स के समान वेतनमान की मांग जो उस समय 1900-1435/- प्रतिमाह- एकल न्यायाधीश उच्च न्यायालय द्वारा उत्तरदाता राज्य सरकार एवं भारत संघ को निर्देश प्रतिमाह 900/- रूपये प्रदान करने के दिए- भारत संघ द्वारा रिट याचिका- राज्य सरकार को पक्षकार नहीं बनाया- उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा वेतनमान की अदायगी का दायित्व राज्य सरकार पर अंतरित किया- अभी निर्धारित- उच्च न्यायालय की खण्डपीठ को यह पता

लगाने के लिए थोड़ी अधिक सावधानी बरतनी चाहिए थी क्या असम राज्य को कार्यवाही में पक्षकार के रूप में शामिल किया गया क्या उन्हें अपील की सूचना दी गई- इस प्रकृति के मामलों में पक्षकार की गलती से भी कार्यवाही में उचित पक्षों को शामिल नहीं किया गया, यह देखना न्यायालय का कर्तव्य है कि पक्षकारों को उचित रूप से पक्षकार बनाया जायें- प्राकृतिक न्याय के अनुरूप यह सुस्थापित सिद्धांत है यदि कुछ व्यक्तियों को उनके लाभ के लिए दिये गये निर्णय को रद्द करने के कारण प्रभावित होने की संभावना है, तो न्यायालय ऐसे व्यक्तियों की अनुपस्थिति में ऐसे निर्णय की शुद्धता पर विचार नहीं करना चाहिए- राज्य सरकार के पक्षकार के रूप में असंयोजन से अधिक आर्थिक दायित्व बिना सुनवाई के आया- मामला उच्च न्यायालय को पुनः नवीन सुनवाई के लिए प्रेषित- हालांकि राज्य सरकार को निर्देष न्यूनतम वेतन उच्च न्यायालय के समक्ष रिट के अंतिम आदेश प्रदान करने तक- नैसर्गिक न्याय- उत्प्रेषण याचिका- सेवा कानून- - वेतनमान में समान।

आवश्यक पक्षकार और उचित पक्षकार- दोनों में अंतर- अभिनिर्धारितः एक आवश्यक पक्ष वह है जिसके बिना कोई भी आदेश प्रभावी ढंग से नहीं दिया जा सकता है और एक उचित पक्ष वह है जिसकी अनुपस्थिति में एक प्रभावी आदेश दिया जा सकता है लेकिन जिसकी

उपस्थिति पूर्ण और अंतिम कार्यवाही में शामिल प्रश्न के निर्णय के लिए आवश्यक है।

साक्ष्यः स्वीकृतिः अभिनिर्धारितः तथ्य के अभिकथन को, यदि प्रतिशपथ पत्र में अस्वीकार विवादित नहीं किया गया है, तो आम तौर पर इसे उत्तरदाताओं द्वारा स्वीकार किया हुआ माना जाएगा।

निर्णय / आदेशः निर्णय के विरूद्ध अपील- अपीलीय न्यायालय का कर्तत्य- अभिनिर्धारित अपीलीय न्यायालय को आक्षेपित निर्णय को उसमें बताए गए तथ्यों के आधार पर देखने की जरूरत है, न कि हमारे सामने जो आग्रह किया गया है उसके आधार पर तथ्यों का अनुमान लगाने की जरूरत है।

भारत संघ ने 01.09.1966 से परिवार नियोजन कार्यक्रम के तहत परिवार कल्याण योजना शुरू की थी। उक्त योजना के तहत, 'स्वैच्छिक महिला परिचारकों की नियुक्ति का प्रावधान था। योजना की शुरूआत से मासिक मानदेय 50/- प्रति माह थी जिसकों बाद में बढ़ाकर 100/- रूपये प्रतिमाह कर दिया। सन् 1973 में एक स्वैच्छिक महिला परिचारक, नन्देश्वरी देवी द्वारा असम राज्य के विरूद्ध उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर की गई जिसका आधार स्वैच्छा महिला परिचारक का कार्य उक्त स्कीम में नियमित रूप से नियुक्त वार्ड गर्ल्स के समान ही है। जिन्हें भारत संघ द्वारा नियुक्त किया है। जिसका वेतनमान उस समय रूपये 900-

1435/- रूपये प्रतिमाह उनके समान वेतनमान चाहा। उच्च न्यायालय की एकल न्यायाधीश द्वारा रिट याचिका को स्वीकार कर राज्य सरकार की न्यूनतम वेतनमान जो कि 900/- रूपये प्रतिमाह था देने का आदेश प्रदान किया। उक्त निर्णय के उपरांत लगभग 54 स्वैच्छिक महिला परिचारकों द्वारा उच्च न्यायालय में याचिका समान अनुतोष जो कि नन्देश्वरी बोरा के केस में था मांगा गया। उक्त याचिका में अनुतोष में सेवाओं का नियमतिकरण एवं उनके अनुसार ही वेतनमान चाहा गया। नन्देश्वरी बोरा के निर्णय के प्रकाश में उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा रिट याचिका को स्वीकार कर उत्तरदाता एवं भारत संघ को तथा राज्य सरकार को 900 रूपये प्रतिमाह न्यूनतम वेतनमान स्वैच्छा महिला परिचारकों को देने का आदेश दिया। हालांकि सेवाओं के नियमतिकरण के लिए उच्च न्यायालय ने मांगा की यह बिंदु असम राज्य के द्वारा कानून के अनुसार तय किया जाएगा।

भारत संघ द्वारा व्यथित होकर उच्च न्यायालय की खण्डपीठ में अपील दायर की। उक्त अपील मेंें भारत संघ में असम राज्य को पक्षकार नहीं बनाया। भारत संघ का यह कथन था कि स्वैच्छा महिला परिचारक उनके कर्मचारी नहीं है एवं उनकी नियुक्ति पत्र असम राज्य द्वारा जारी किये गये है जिसमें संघ द्वारा पोषित स्कीम में नियुक्ति नहीं दी गई है। खण्डपीठ द्वारा भारत संघ को स्वैच्छा महिला परिचारकों को अदायगी के दायित्व से

मुक्त किया व उसका भार असम राज्य पर डाला। इस कारण असम राज्य द्वारा उक्त निर्णय को चुनौती देते हुए अपील दायर की गई।

अपील को स्वीकार किया गया और उच्च न्यायालय को प्रकरण भेजा गया।

अभिनिर्धारणः

(1.1) उत्प्रेषण रिट की कार्यवाही में, न केवल न्यायाधिकरण या प्राधिकारी जिसके आदेश को रद्द करने की मांग की जाती हैए बल्कि वे पक्ष भी आवश्यक पक्ष होते हैं जिनके पक्ष में उक्त आदेश जारी किया गया हैए और विवाद में शामिल सभी प्रश्नों को पूरी तरह से निपटाने के लिए उचित पक्षों को जोड़ना या शामिल करनाए या तो स्वतः संज्ञान या किसी पक्ष के आवेदन पर ऐसे उचित पक्ष के कहने पर दायर की गई रिट या आवेदन न्यायालय के विवेक पर है कि एक आवश्यक पक्ष वह है जिसके बिना कोई भी आदेश प्रभावी ढंग से नहीं दिया जा सकता है और एक उचित पक्ष वह है जिसकी अनुपस्थिति में एक प्रभावी आदेश दिया जा सकता है लेकिन जिसकी उपस्थिति पूर्ण और अंतिम कार्यवाही में शामिल प्रश्न के निर्णय के लिए आवश्यक है।

(1.2) असम राज्य विशेष रूप से उत्तरदाताओं के साथ इस मुद्दे में शामिल हुआ है कि अपीलकर्ता को न तो कार्यवाही में पक्षकार के रूप में शामिल किया गया था और न ही उसके खिलाफ प्रतिकूल आदेश पारित

करने से पहले मामले में उसकी बात सुनी गई थी। अपने जवाबी हलफनामे में भारत संघ द्वारा विभिन्न दावों का खण्डन किया है, लेकिन जहां तक अपीलकर्ताओं के उपरोक्त दावे की बात है, उनके द्वारा यह नहीं कहा गया है कि उन्होंने असम राज्य को कार्यवाही में पक्षकार के रूप में रखा था और न ही वह इस बात पर जोर देते है कि विद्वान वकील द्वारा राज्य के लिए इस मामले में सुनवाई की गई। हमारे विचार में, उत्तरदाताओं को तथ्य के प्रत्येक अभिकथन से विशेष रूप से निपटना चाहिए, जिससे वह सत्य नहीं मानता है। तथ्य के अभिकथन को, यदि प्रतिशपथ पत्र में अस्वीकार विवादित नहीं किया गया है, तो आम तौर पर इसे उत्तरदाताओं द्वारा स्वीकार किया हुआ माना जाएगा। असम राज्य ने इन अपीलों को दायर करते समय उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के समक्ष भारत संघ द्वारा दायर रिट अपील के ज्ञापन की प्रतियां संलग्न की है। उसी पर गौर करने पर हमारा विचार है कि उठाए गए, सुझाव आधारों और मांगी गई राहत के आलोक में, असम राज्य को एक आवश्यक पक्षकार के रूप में शामिल होना चाहिए था। कारण, सबसे पहले निजी उत्तरदाताओं द्वारा दायर की गई रिट याचिका में असम राज्य पहला प्रतिवादी था। दूसरे, भारत संघ की मुख्य शिकायत स्वयंसेवकों को न्यूनतम वेतनमान देने के लिए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा जारी निर्देश के खिलाफ थी, क्योंकि रिट अपील में उनका रुख है कि योजना के तहत उनका दायित्व केवल उस सीमा तक है, स्वैच्छिक महिला परिचारिकाओं को देय मानदेय के रूप में 100/- प्रति

माह और इससे अधिक कुछ भी राज्य सरकार द्वारा भुगतान किया जाना आवश्यक है। तीसरा, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि नियुक्तियाँ राज्य सरकार द्वारा की गई थी, एकल न्यायाधीश के निर्देशानुसार वेतन मजदूरी के भुगतान का बोझ असम राज्य पर डाल दिया है। हमारे विचार में, इस चूक या चूक को न तो तकनीकी उल्लंघन माना जा सकता है और न ही केवल एक अनियमितता, क्योंकि इस चूक के परिणामस्वरूप एक पक्ष को निष्पक्ष सुनवाई के बिना प्रतिकूल आदेश भुगतना पड़ा है।

(2.1) अपीलीय न्यायालय को यह देखना है कि आक्षेपित निर्णय को उसमें बताए गए तथ्यों के आधार पर देखने की जरूरत है, न कि हमारे सामने जो आग्रह किया गया है उसके आधार पर तथ्यों का अनुमान लगाने की जरूरत है। दूसरे शब्दों में, अपीलीय अदालत हमेशा इस धारणा पर आगे बढ़ती है कि जो कुछ भी स्पष्ट शब्दों में रिकॉर्ड पर है वह सही तथ्यात्मक स्थिति है, न कि वह जो छिटपुट टिप्पणियों की व्याख्या करके अनुमान लगाया जा सकता है।

(2.2) उच्च न्यायालय को, हमारे विचार में, भारत संघ द्वारा द्वापर अपीलों की अनुमति देते समय और स्वैच्छिक महिला परिचारकों को वेतन मजदूरी के भुगतान की जिम्मेदारी असम राज्य पर डालते समय यह पता लगाने के लिए थोड़ी अधिक सावधानी बरतनी चाहिए थी। क्या असम

राज्य को कार्यवाही में एक पक्ष के रूप में शामिल किया गया है और क्या उन्हें अपील की सूचना दी गई है और क्या तामील के बावजूद अनुपस्थित रहे हैं। न्यायालय से यह न्यूनतम अपेक्षा है। इस छोटे से सत्यापन के बिना उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने राज्य सरकार पर बड़ी आवती वित्तीय देनदारी तय कर दी है। हमारी राय में, इस प्रकृति के मामलों में, पार्टी की गलती से भी कार्यवाही में उचित पक्षों को शामिल नहीं किया गया था, यह देखना न्यायालय का कर्तव्य है कि पार्टियों को उचित रूप से पक्षकार बनाया जाए। प्राकृतिक न्याय के अनुरूप यह सुस्थापित सिद्धांत है कि यदि कुछ व्यक्तियों को उनके लाभ के लिए लिए गए निर्णय को रद्द करने के कारण प्रभावित होने की संभावना है, तो न्यायालय को ऐसे व्यक्तियों की अनुपस्थिति में ऐसे निर्णय की शुद्धता पर विचार नहीं करना चाहिए।

(3.) इस न्यायालय द्वारा दिनांक 20.04.2009 को पारित अंतरिम आदेशों को ध्यान में रखते हुए, जिसके अनुसार असम राज्य न्यूनतम वेतन का भुगतान कर रहा है। निजी उत्तरदाताओं के पैमाने पर हमारा विचार है कि इन अपीलों में निजी उत्तरदाताओं को असम राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष अपील के लंबित रहने के दौरान न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के तहत देय कम से कम न्यूनतम मजदूरी का भुगतान करने की आवश्यकता है। अंतिम आदेश जो उच्च न्यायालय द्वारा पारित किये जा सकते हैं।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील नम्बर 2010 के 8378, 8392 और

न्यायाधिपति एच. एल. दत्तू के द्वारा निर्णय अभिनिर्धारित किया गया।

(1.) अनुमति प्रदान की गयी।

(2.) अपीलकर्ता, डब्ल्यूए संख्या 535/2001 और अन्य संबंधित अपीलों में निर्णय और आदेश से व्यथित है और साथ ही गौहाटी उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा समीक्षा याचिका संख्या 124/2006 को खारिज कर दिया गया है, जो हमारे समक्ष अपील के रूप में है।

(3.) संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैः-

भारत संघ (यहां उत्तरदाताओं) ने 1 सितंबर, 1996 से अपने परिवार नियोजन कार्यक्रम के तहत परिवार कल्याण योजना शुरू की थी। उक्त योजना के तहत, स्वैच्छिक महिला परिचारकों की नियुक्ति का प्रावधान था। योजना की शुरूआत से मासिक मानदेय 50/- प्रति माह था, जिसे बाद में फरवरी 2001 से बढ़ाकर 100/- प्रति माह कर दिया गया। भारतीय संघ के अनुसार, इन परिचारकों का काम अपने इलाके में एक छोटा परिवार रखने के लिए लोगों को प्रेरित करना है। भारत संघ का अभिकथन निजी उत्तरदाताओं द्वारा विवादित है। उनका दावा है कि यद्यपि उन्हें स्वंयसेवकों के रूप में नियुक्त किया गया था, लेकिन उन्हें क्षेत्र के दौरे के समय

स्वास्थ्य उप-केन्द्रों में सहायक नर्सों-सह-दाइयों की सहायता करेन और उप-केन्द्रों में सफाई आदि जैसे विविध कार्यों के लिए नियुक्त किया गया था।

(4.) किसी समय वर्ष 1993 में एक स्वैच्छिक महिला परिचारक - नंदेश्वरी बोरा ने असम राज्य के खिलाफ गौहाटी उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका सीआर संख्या 3847/1993 दायर, कि स्वैच्छिक महिला परिचारक का कार्य उपरोक्त योजना और उसमें उत्तरदाताओं द्वारा नियमित रूप से नियुक्त वार्ड गर्ल्स की योजना समान थी और इसलिए, उन्होंने वार्ड गर्ल्स के वेतनमान में समानता की मांग की, जो उस समय 900-1435 प्रति माह थी। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने रिट याचिका को स्वीकार कर लिया और राज्य सरकार को काल-क्रम वेतनमान में न्यूनतम वेतनमान यानी 900/- प्रति माह का भुगतान करने का निर्देश दिया। दुर्भाग्य से, विद्वान एकल न्यायाधीश के इस फैसले की इबारत हमारे अवलोकन के लिए हमारे सामने नहीं है, क्योंकि दोनों पक्षों के वकील ने कहा है कि हालांकि उन्होंने फैसले की प्रमाणित प्रति हासिल करने के लिए सभी प्रयास किये हैं, लेकिन वे असफल रहे हैं। चूंकि यह गौहाटी उच्च न्यायालय की रजिस्ट्री में उपलब्ध नहीं है। इसलिए, हमें विद्वान न्यायाधीश के निष्कर्ष में उनके तर्क को देखे बिना आगे बढ़ना होगा। हालांकि, उच्च न्यायालय द्वारा पारित बाद के फैसले में, नंदेश्वरी बोरा के मामले में विद्वान

एकल न्यायाधीश द्वारा पहुंचे निष्कर्षों और निष्कर्षों का कुछ संदर्भ है। इससे हमें नंदेश्वरी बोरा के मामले में दिए गए तर्क और निष्कर्ष को समझने में मदद मिल सकती है।

(5.) 1993 के सीआर नंबर 3847 में नंदेश्वरी बोरा के मामले में उच्च न्यायालय के फैसले के बाद, लगभग 54 (चैवन) स्वैच्छिक महिला परिचारकों ने उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर की, अन्य बातों के साथ-साथ उसी राहत की मांग की जो नंदेश्वरी बोरा के मामले में दी गई थी। मुख्य मामला जलिनी ब्रह्मा द्वारा 1995 का सीआर नंबर 3073 था। रिट याचिका में जो राहत मांगी गई थी वह उनकी सेवाओं के नियमितीकरण और मौजूदा वेतनमान के अनुसार वेतन के भुगतान के लिए थी। नंदेश्वरी बोरा के मामले न्यायालय के फैसले के आलोक में, उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने दिनांक 22.02.2000 के फैसले और आदेश द्वारा रिट याचिका को आंशिक रूप से स्वीकार कर लिया और सभी उत्तरदाताओं (जिसमें भारत संघ और राज्य सरकार शामिल थे) को निर्देशित किया। स्वैच्छिक महिला परिचारकों को न्यूनतम वेतनमान 900/- प्रति का भुगतान करेगी। निर्णय और आदेश का आॅपरेटिव भाग निकाला जाता है। यह पढ़ता है:-

उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ऐसा कुछ भी दिखाने में सक्षम नहीं है जिससे याचिकाकर्ताओं को उनके न्यूनतम वेतन से वंचित किया जा सके।

यह निवेदन है कि 1990 के आरओपी नियम 900-1435/- रूपये का वेतनमान महिला परिचारक के पद पर प्रदान करते हैं। तदनुसार, मैं सभी 7 उत्तरदाताओं को निर्देश देता हूं कि वे याचिकाकर्ता को जुलाई 1990 के महीने से या उनके रोजगार की तारीख से, जो भी बाद में हो, न्यूनतम वेतन 900/- रूपये प्रति माह का भुगतान करें।

(6.) हालांकि, सेवा के नियमितीकरण के प्रश्न के संबंध में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने कहा है कि असम राज्य इस पर कानून के अनुसार विचार कर सकता है।

(7.) इसके बाद, 2001 की एक और रिट याचिका संख्या 5496 हजेरा खातून द्वारा जलिनी ब्रह्मा के मामले की तरह ही राहत के लिए दायर की गई। याचिका में 5 (पांच) उत्तरदाता थे, उनमें भारत संघ और असम राज्य भी शामिल थे। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने जलिनी ब्रह्मा के मामले में न्यायालय के निर्णय के आलोक में इसका निपटारा कर दिया।

(8.) हजेरा खातून द्वारा दायर रिट याचिका के निपटान के बाद, भारत संघ ने उक्त आदेश और जलिनी ब्रह्मा के मामले में पारित आदेशों से व्यथित होकर, उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के समक्ष अपील दायर की। इस प्रकार दायर की गई अपीलों में, आश्चर्यजनक रूप से, भारत संघ ने

असम राज्य को उन कार्यवाहियों में एक पक्ष के रूप में शामिल नहीं किया।

(9.) उन अपीलों में, भारत संघ ने तर्क दिया कि स्वैच्छिक महिला परिचारक उनके कर्मचारी नहीं थे और इसलिए, विद्वान एकल न्यायाधीश को भारत संघ को न्यूनतम वेतनमान के भुगतान के लिए कोई निर्देश जारी नहीं करना चाहिए था। यह आगे रिकार्ड में लाया गया कि असम राज्य ने इन महिला परिचारकों को नियुक्ति पत्र जारी किए थे और उन नियुक्ति पत्रों में कोई उल्लेख नहीं था कि उन्हें केंद्र प्रायोजित योजना के तहत नियुक्त किया गया था। इसलिए, भारत संघ ने न्यायालय से अनुरोध किया कि वह नियुक्ति आदेश पत्र जारी करके राज्य सरकार द्वारा नियुक्त निजी उत्तरदाताओं को वेतन के किसी भी भुगतान के द्वायित्व से मुक्त कर दें। खण्डपीठ ने भारत संघ के रूख को स्वीकार करते हुए कहा है-

> "हालांकि, इस फैसले को विचार के रूप में देखा जाएगा कि प्रश्नगत नियुक्ति पत्रों का केंद्र प्रायोजित योजना से कोई लेना-देना नहीं है। वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा समर्थित निश्चित मानदेय पर स्वैच्छिक कार्यकर्ता न तो रिट याचिकाओं में दावे में और न ही नियुक्ति पत्रों में न्यूनतम मजदूरी के लिए भारत संघ पर किसी भी दायित्व को आमंत्रित करने और तय करने का कोई विवाद है। ऐसा कोई भी विवाद एक

मामला है रिट याचिकाओं के अधिकारों को प्रभावित किए बिना भारत संघ और असम राज्य द्वारा निपटारा किया जाएगा। भारत संघ द्वारा दायर अपीलों की अनुमति दी। इन संबंधित रिट अपीलों में भारत संघ का कोई दायित्व नहीं है। रिट याचिकाएँ..... "

(10.) इस आदेश के द्वारा उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने भारत संघ को इन स्वैच्छिक महिला परिचारकों को न्यूनतम वेतनमान का भुगतान करने की जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया, लेकिन यह दायिन असम राज्य पर तय कर दिया।

(11.) खण्डपीठ के फैसले और आदेश से व्यथित होकर, असम राज्य द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर एक समीक्षा याचिका दायर की गई थी कि उनके खिलाफ प्रतिकूल आदेश पारित करने से पहले उनकी बात नहीं सुनी गई थी। एक सहज आदेश द्वारा खण्डपीठ ने इसे खारिज कर दिया है। असम राज्य ने हमारे सामने, उक्त अपील में गौहाटी उच्च न्यायालय के फैसले और आदेश से व्यथित होकर समीक्षा याचिका को खारिज करने के खिलाफ यह रिट पेश की है।

(12.) अपीलकर्ताओं की ओर से वरिष्ठ वकील श्री कृष्णन वेणुगोपाल उपस्थित हुए। श्री एचपी रावल, विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, भारत संघ की ओर से उपस्थित हुए। निजी उत्तरदाताओं का प्रतिनिधित्व श्री

विजय हंसारिया, विद्वान वरिष्ठ वकील और श्री संजीव सेन, विद्वान वकील द्वारा किया गया।

(13.) असम राज्य ने विशेष अनुमति के लिए अपनी याचिकाओं में कई आधार उठाए है। हालांकि इन अपीलों की सुनवाई के समय, असम राज्य के विद्वान वरिष्ठ वकील ने तर्क दिया कि असम राज्य को कार्यवाही में पक्षकार के रूप में नहीं रखा गया था और राज्य को पक्षकार बनाए बिना और सुनवाई का अवसर दिए बिना, खण्डपीठ को राज्य के खिलाफ प्रतिकूल आदेश पारित नहीं करना चाहिए था। उन्होंने आगे तर्क दिया कि असम राज्य उच्च न्यायालय के समक्ष मुकदमे के लिए एक आवश्यक पक्ष था और पक्षकार असंयोजन न करना प्राकृतिक न्याय के सुस्थापित सिद्धांत, अर्थात् ऑडी अल्टरम पार्टम के विपरीत था। इस प्रस्तुतीकरण की सहायता में, विद्वान वरिष्ठ वकील ने उदित नारायण सिंह मल्फारिया बनाम अतिरिक्त सदस्य राजस्व बोर्ड, बिहार (एआईआर 1963 एससी 786) के मामले में न्यायालय निर्धारित कानून पर निर्भर है। जिसमें यह माना गया था कि उत्प्रेषण रिट की कार्यवाही में, न केवल न्यायाधिकरण या प्राधिकारी जिसके आदेश को रद्द करने की मांग की जाती है, बल्कि वे पक्ष भी आवश्यक पक्ष होते हैं जिनके पक्ष में उक्त आदेश जारी किया गया है, और विवाद में शामिल सभी प्रश्नों को पूरी तरह से निपटाने के लिए उचित पक्षों को जोड़ना या शामिल करना, या तो स्वतः संज्ञान या किसी पक्ष के आवेदन

पर ऐसे उचित पक्ष के कहने पर दायर की गई रिट या आवेदन न्यायालय के विवेक पर है।

(14.) हम उदित नारायण के मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों से सम्मानपूर्वक सहमत है और उसे अपनाते हैं। हम यह जोड़ सकते हैं कि कानून अब अच्छी तरह से तय हो गया है कि एक आवश्यक पक्ष वह है जिसके बिना कोई भी आदेश प्रभावी ढंग से नहीं दिया जा सकता है और एक उचित पक्ष वह है जिसकी अनुपस्थिति में एक प्रभावी आदेश दिया जा सकता है लेकिन जिसकी उपस्थिति पूर्ण और अंतिम कार्यवाही में शामिल प्रश्न के निर्णय के लिए आवश्यक है।

(15.) दायर अपीलों में, असम राज्य विशेष रूप से उत्तरदाताओं के साथ इस मुद्दे में शामिल हुआ है कि अपीलकर्ता को न तो कार्यवाही में पक्षकार के रूप में शामिल किया गया था और न ही उसके खिलाफ प्रतिकूल आदेश पारित करने से पहले मामले में उसकी बात सुनी गई थी। उठाया गया विशिष्ट मुद्दा इस प्रकार है-

> "सी) इसके लिए माननीय न्यायालय की खण्डपीठ अपनी समीक्षा के साथ-साथ रिट, अपीलीय क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय मामले के तथ्यों की सराहना करने में विफल रही और इस तथ्य को नजरअंदाज कर दिया कि असम राज्य वर्तमान याचिकाकर्ता को उत्तरदाता नंबर द्वारा मुख्य

की गई उक्त 14 रिट अपीलों में पार्टी नहीं बनाया गया था, जबकि उक्त रिट अपीलों को अनुमति देते हुए भारत संघ उत्तरदाता नं. 1 की जिम्मेदारी को मानदेय का भुगतान करने से मुक्त कर दिया गया था। रिट याचिकर्ताओं को 900 रूपये प्रतिमाह की बढ़ी हुई दर और इस तरह के भुगतान का पूरा बोज असम राज्य पर डालना और विशेष रूप से तब जब असम राज्य को उपरोक्त रिट अपीलों में पक्षकार नहीं बनाया गया था। आयोग के मध्यनज़र कानून और तथ्यों की ऐसी घोर त्रुटि के कारण, 16 नवंबर, 2007 के उक्त आक्षेपित आदेश और 2 सितंबर, 2003 के निर्णय और आदेश में न्यायालय के उद्देश्य को पूरा करने के लिए हस्तक्षेप किया जा सकता है।"

(16.) भारत संघ ने अपना जवाबी हलफनामा दायर किया है। इसने अपीलकर्ताओं द्वारा किये गये विभिन्न दावों का खण्डन किया है, लेकिन जहां तक अपीलकर्ताओं के उपरोक्त दावे की बात है, उनके द्वारा यह नहीं कहा गया है कि उन्होंने असम राज्य को कार्यवाही में पक्षकार के रूप में रखा था और न ही वह इस बात पर जोर देते है कि विद्वान वकील द्वारा राज्य के लिए इस मामले में सुनवाई की गई। हमारे विचार में, उत्तरदाताओं को तथ्य के प्रत्येक अभिकथन से विशेष रूप से निपटना चाहिए, जिससे

वह सत्य नहीं मानता है। तथ्य के अभिकथन को, यदि प्रतिशपथ पत्र में अस्वीकार विवादित नहीं किया गया है, तो आम तौर पर इसे उत्तरदाताओं द्वारा स्वीकार किया हुआ माना जाएगा।

(17.) विद्वान एएसजी श्री एचपी रावल ने हमारा ध्यान रिट अपील के आक्षेपित फैसले में की गई टिप्पणी की ओर आकर्षित किया, जिसमें कहा गया था कि हालांकि दायर किए गए अपील ज्ञापन में असम राज्य को एक पक्ष के रूप में नहीं रखा गया था, लेकिन विद्वान सरकारी वकील की बात मामले में सुनी गई थी अपने प्रस्तुतीकरण के समर्थन में विद्वान एएसजी आदेश के दौरान न्यायालय द्वारा की गई निम्नलिखित टिप्पणियों पर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं-

> "5.) हमने विद्वान वरिष्ठ सीजीएससी और सरकारी अधिवक्ताओं को विस्तार से सुना है, इन अपीलों में सभी प्रासंगिक सामग्रियों पर विचार किया है और एकल पीठ द्वारा पारित निर्णय और आदेश का अवलोकन किया है।"

(18.) उपरोक्त अवलोकन को ध्यान में रखते हुए श्री. रावल ने हमारे सामने आग्रह किया कि फैसले में दिए गए संदर्भ से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि असम राज्य की बात उनके सरकारी वकील के माध्यम से सुनी गई थी। इसलिए उनका कहना है कि असम राज्य द्वारा यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि आक्षेपित निर्णय पारित करने से पहले उनकी बात

नहीं सुनी गई थी। हमारा सुझाव इस तर्क को स्वीकार करने का इच्छुक नहीं है।

(19.) असम राज्य ने इन अपीलों को दायर करते समय उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के समक्ष भारत संघ द्वारा दायर रिट अपील के ज्ञापन की प्रतियां संलग्न की है। उसी पर गौर करने पर हमारा विचार है कि उठाए गए, सुझाव आधारों और मांगी गई राहत के आलोक में, असम राज्य को एक आवश्यक पक्षकार के रूप में शामिल होना चाहिए था। कारण, सबसे पहले निजी उत्तरदाताओं द्वारा दायर की गई रिट याचिका में असम राज्य पहला प्रतिवादी था। दूसरे, भारत संघ की मुख्य शिकायत स्वयंसेवकों को न्यूनतम वेतनमान देने के लिए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा जारी निर्देश के खिलाफ थी, क्योंकि रिट अपील में उनका रुख है कि योजना के तहत उनका दायित्व केवल उस सीमा तक है, स्वैच्छिक महिला परिचारिकाओं को देय मानदेय के रूप में 100/- प्रति माह और इससे अधिक कुछ भी राज्य सरकार द्वारा भुगतान किया जाना आवश्यक है। तीसरा, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि नियुक्तियाँ राज्य सरकार द्वारा की गई थी, एकल न्यायाधीश के निर्देशानुसार वेतन मजदूरी के भुगतान का बोझ असम राज्य पर डाल दिया है। हमारे विचार में, इस चूक या चूक को न तो तकनीकी उल्लंघन माना जा सकता है और न ही केवल एक अनियमितता, क्योंकि इस चूक के

परिणामस्वरूप एक पक्ष को निष्पक्ष सुनवाई के बिना प्रतिकूल आदेश भुगतना पड़ा है।

(20.) हम अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री रावल के इस तर्क से भी सहमत नहीं हो सकते हैं कि असम राज्य के विद्वान सरकारी वकील को डिविजन बेंच ने विवादित आदेश पारित करने से पहले सुना था क्योंकि यह इस न्यायालय द्वारा लगातार निर्धारित किया जाता है। हमें आक्षेपित निर्णय को उसमें बताए गए तथ्यों के आधार पर देखने की जरूरत है, न कि हमारे सामने जो आग्रह किया गया है उसके आधार पर तथ्यों का अनुमान लगाने की जरूरत है। दूसरे शब्दों में, अपीलीय अदालत हमेशा इस धारणा पर आगे बढ़ती है कि जो कुछ भी स्पष्ट शब्दों में रिकॉर्ड पर है वह सही तथ्यात्मक स्थिति है, न कि वह जो छिटपुट टिप्पणियों की व्याख्या करके अनुमान लगाया जा सकता है। यह सिद्धांत अब इस न्यायालय के कई निर्णयों से अच्छी तरह स्थापित हो गया है।

1.) उदित नारायण सिंह मालफारिया बनाम अतिरिक्त सदस्य, राजस्व बोर्ड, बिहार, एआईआर 1963 एससी 786

2.) महाराष्ट्र राज्य बनाम आर.एस. नायक, (1982) 2 एससीसी 463

3.) अपार प्रा. लिमिटेड बनाम भारत संघ, (1992) सप (1), एससीसी 1, रजिस्ट्रार

4.) उस्मानिया विश्वविद्यालय बनाम के. ज्योति लक्ष्मी, (2000) 9 एससीसी 177

(21.) हम उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के समक्ष दायर रिट अपीलों में पार्टियों की श्रृंखला से असम राज्य को हटाने कि भारत संघ के किसी भी संभावित कारण को समझने में असमर्थ है। यह तथ्य है कि उन्हें कार्यवाही में पक्षकार नहीं बनाया गया। उच्च न्यायालय को, हमारे विचार में, भारत संघ द्वारा द्वापर अपीलों की अनुमति देते समय और स्वेच्छिक महिला परिचारकों को वेतन मजदूरी के भुगतान की जिम्मेदारी असम राज्य पर डालते समय यह पता लगाने के लिए थोड़ी अधिक सावधानी बरतनी चाहिए थी। क्या असम राज्य को कार्यवाही में एक पक्ष के रूप में शामिल किया गया है और क्या उन्हें अपील की सूचना दी गई है और क्या तामील के बावजूद अनुपस्थित रहे हैं। न्यायालय से यह न्यूनतम अपेक्षा है। इस छोटे से सत्यापन के बिना उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने राज्य सरकार पर बड़ी आवती वित्तीय देनदारी तय कर दी है। हमारी राय में, इस प्रकृति के मामलों में, पार्टी की गलती से भी कार्यवाही में उचित पक्षों को शामिल नहीं किया गया था, यह देखना न्यायालय का कर्तव्य है कि पार्टियों को उचित रूप से पक्षकार बनाया जाए। प्राकृतिक न्याय के अनुरूप यह सुस्थापित सिद्धांत है कि यदि कुछ व्यक्तियों को उनके लाभ के लिए लिए गए निर्णय को रद्द करने के कारण प्रभावित होने की संभावना है, तो

न्यायालय को ऐसे व्यक्तियों की अनुपस्थिति में ऐसे निर्णय की शुद्धता पर विचार नहीं करना चाहिए।

(22.) उपरोक्त निष्कर्षों के आलोक में, हमारे पास आक्षेपित निर्णय को रद्द करने और मामले को नए सिरे से सुनवाई के लिए उच्च न्यायालय की खण्डपीठ को भेजने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है।

(23.) अगला मुद्दा जिस पर हमें ध्यान देने की आवश्यकता है वह है, पिछले दो दशकों से स्वयंसेवकों के रूप में काम कर रहे निजी उत्तरदाताओं के हितों की रक्षा के लिए क्या किया जाना चाहिए। क्या उन्हें उच्च न्यायालय द्वारा रिट अपील पर निर्णय आने तक इंतजार करना चाहिए या क्या उन्हें अंतराल के दौरान कुछ पारिश्रमिक का भुगतान किया जाना चाहिए। यदि उन्हें तुरंत भुगतान करना है, तो राशि क्या है और किसे भुगतान करना चाहिए?

(24.) श्री विजय हंसारिया और निजी उत्तरदाताओं की ओर से पेश हुए श्री संजीव सेन ने हमारे सामने जोरदार तर्क दिया है कि मामले को केवल यह तय करने के लिए भेजा जा सकता है कि निजी उत्तरदाताओं को वेतन के भुगतान का बोझ किसे उठाना चाहिए।

(25.) अपने निवेदन के समर्थन में उन्होंने हमारे समक्ष आग्रह किया है कि वेतन भुगतान का दायित्व मौजूद है या नहीं, यह मुद्दा अंतिम रूप

ले चुका है। एकमात्र मुद्दा जिस पर उच्च न्यायालय को विचार करने की आवश्यकता है वह यह है कि जिम्मेदारी किसे उठानी चाहिए। यह बताया गया है कि जलिनी ब्रह्मा के मामले में, गौहाटी उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने निजी उत्तरदाताओं और इसी तरह के व्यक्तियों को वेतन के भुगतान की जिम्मेदारी सभी उत्तरदाताओं पर डाल दी है। भारत संघ और राज्य सरकार (या उनके पदाधिकारी उन्होंने आगे कहा कि दायित्व के प्रश्न, जैसा कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा तय किया गया था, के खिलाफ कभी अपील नहीं की गई थी और जहां तक नियमित रूप से नियुक्त वार्ड गर्ल्स के बराबर स्वेच्छिक महिला परिचारकों को न्यूनतम वेतन का भुगतान भी अंतिम रूप ले चुका है। उन्होंने निष्पक्ष रूप से स्वीकार किया कि उनकी सेवा को नियमित करने के उनके अनुरोध के संबंध में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने निजी उत्तरदाताओं के खिलाफ फैसला किया था, और चूंकि उन्होंने इसके खिलाफ कभी अपील नहीं की थी, इसलिए इसे अंतिम रूप भी मिल गया था। इसलिए, विद्वान वकील का तर्क होगा कि जब तक उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा अपील पर फैसला नहीं किया जाता है, तब तक असम राज्य को निजी उत्तरदाताओं को न्यूनतम वेतनमान का भुगतान करने का निर्देश दिया जाना चाहिए।

(26.) लिस के पक्षकारों के विद्वान वकील द्वारा सुझाई गई प्रतिद्वंद्वी राय पर विचार करने के बाद और इस न्यायालय द्वारा दिनांक

20.04.2009 को पारित अंतरिम आदेशों को ध्यान में रखते हुए, जिसके अनुसार असम राज्य न्यूनतम वेतन का भुगतान कर रहा है। निजी उत्तरदाताओं के पैमाने पर हमारा विचार है कि इन अपीलों में निजी उत्तरदाताओं को असम राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष अपील के लंबित रहने के दौरान न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के तहत देय कम से कम न्यूनतम मजदूरी का भुगतान करने की आवश्यकता है। अंतिम आदेश जो उच्च न्यायालय द्वारा पारित किये जा सकते हैं।

(27.) उपरोक्त के मद्देनजर हम इन अपीलों को स्वीकार करते हैं और गोहाटी उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा पारित फैसले और आदेशों को रद्द कर देते हैं और अपीलों को जल्द से जल्द निपटाने के अनुरोध के साथ मामले को उच्च न्यायालय में भेज देते हैं। किसी भी दर पर आज से छह महीने के भीतर यह सुनिश्चित करने के बाद कि उचित पक्षों को पक्षकार बनाया गया है। अंतराल के दौरान, हम राज्य सरकार को निजी उत्तरदाताओं को उनके आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचित न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के प्रावधानों के तहत न्यूनतम मजदूरी का भुगतान करने का निर्देश देते हैं। सभी पक्षों को ऐसे सभी विवाद उठाने की स्वतंत्रता सुरक्षित है जो उनके लिए उपलब्ध है, जिसमें इस न्यायालय के समक्ष उठाए गए विवाद भी शामिल हैं। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, हम पार्टियों को अपनी लागत स्वयं वहन करने का निर्देश देते हैं।।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी सुश्री निष्ठा पाण्डेय (आर.जे.एस) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।